एक भले से शिक्षक का एक भला सा विद्यार्थी

एक गुरूजी थे। नाम से विष्णु और स्वभाव से सहिष्णु। सहिष्णु यानि सज्जन। शायद ही कभी किसी को डाँटते। विद्यार्थियों को आँख या छड़ी दिखाना उनके बस की बात नहीं थी। अहाते में घुस आई गाय को जब वे कपड़े सुखाने का लाठी दिखाते तो गाय रंभा कर गर्दन आगे बढ़ा देती कि अच्छे गुरूजी मुझे सहला दो। और गाय को भगाने की बजाए वे उसे रोटी खिलाने लगते।

सबके सामने वे कुछ नहीं कहते लेकिन मन में यह शिकायत रहती कि बच्चे पढ़ना नही चाहते। विष्णुपंत (मराठी में नाम के आगे पंत लगाना आदरसूचक होता है) जब गाँव की पाठशाला में पढाते थे तब भी बच्चे पढ़ाई से दूर भागते। बाद में वे शहर के कालिज में पढ़ाने लगे तब तो छात्र भागते ही भागते। लिहाजा उन्होंने दूसरों को पढ़ाना छोड़ दिया और खुद को ही पढ़ाने लगे। उनका विषय था चित्रकला और निसर्ग। यह कैसा घालमेल है? सोचोगे तो समझ में आएगा। चित्रकला यानि अलग अलग आकारों और रंगों का मेल है? प्रकृति में देखो– पत्ते, टहनियाँ, पत्थर, बादल कितने तरह के आकार हैं। रंग इतने कि एक हरे की सैकड़ों छटाएँ देख लो।

ये बात बहुत पुरानी है। तब सब्जियाँ सेर से मिलती थी और दूरी मील में नापी जाती थी। वे दिन बहुत ही सरल थे। गुरूजी दिन में दो बार साइकिल चलाते हुए डेढ़ कोस दूर कालिज जाते थे। अक्सर उनका कुत्ता मोती भी उनके पीछे हो लेता था। वह भी उनकी तरह ही सहिष्णु था। कुल तीन कोस की दूरी में वह पैदल दो बार ओवर ब्रिज चढ़ता उतरता, कई चौराहे पार करता, कितने ही आवारा कुत्तों की परवाह किए बिना गुरूजी की राह पर बगैर भटके चलता रहता। कक्षा में पूरे समय उनकी मेज के नीचे थूथन टिकाए सुनता रहता। न पानी पेशाब की छुट्टी मांगता न भूख लगी है का शोर मचाता। यह देखकर गुरूजी को बच्चों का बर्ताव और भी अखरता।

ऐसे लोग गांधीजी को अपने काफी पास अनुभव करते हैं। मैसूर के ऊँचाई से गिरने वाले एक जलप्रपात के बारे में गांधीजी ने कहा था कि यह तो कुछ भी नहीं है। वे प्रकृति का जलप्रपात (वर्षा) देखते हैं जो ठेठ आसमान से गिरता है। यह बात गुरूजी के मन में घर कर गई। उन्होंने रंग, ब्रुश, कैनवास सब छोड़ दिए। वे नैसर्गिक आकार और रंग यानि सूखी टहनियाँ, छाल, फूल, पत्ते वगैरा में चित्र देखने लगे। ऐसा नही कि वे कंपनी के रंगों का उपयोग नहीं जानते थे। चित्र उन्होंने खूब बनाए। कस्बे में रहते हुए ही दिल्ली, कलकत्ता, लखनऊ और बंबई के लोग उनके चित्रों को जानने लगे थे। रवीन्द्रनाथ टैगोर की सहेली रानू मुखर्जी गुरूजी की भक्तिन बन गई थी।

ऐसे में लोगों ने गुरूजी की नई प्रदर्शनी देखी तो बिदक उठे। उसमें चित्रों के नाम पर गुलमोहर की फलियाँ, आम की गुठलियाँ, पेड़ों की छाल, जलाऊ लकड़ी वगैरा थे। दोस्तों को लगा कि यह शख्स दिमाग से खिसक गया है। फिर कुछ पंडित किस्म के लोग थे जो तैश में आकर रोज बहस करने पर आमादा हो जाते। उन्हें लगता कि यह चित्रकला, जिसे फाइन आर्ट कहते हैं, उसके साथ भद्दा मजाक है। कुछ साल बाद, जब गुरूजी के इस मर्ज को लाइलाज मान लिया गया शहर में किसी के हाथ पिकासो की एक पुस्तक लगी। पाब्लो पिकासो पिछली सदी का योरप का सबसे अद्‌भुत चित्रकार था। अच्छे भले चित्र बनाना छोड़ वह भी ऐसे ही काम करने लगा था। जैसे साइकिल की सीट और हैंडल से सांड का सिर बनाना। यह देखकर अब उन्हीं लोगों ने गुरूजी की प्रशंसा करना शुरू कर दिया।

गुरूजी तो बस प्रकृति में ही रम गए। पानी में जमी काई और दीवारों पर लगे मकड़ी के जालों में उन्हें चित्र दिखाई देने लगे। जली हुई रोटी और दीवार पर बरसाती सीलन में वे चित्र खोजने लगे। हर वस्तु में उन्हें चित्र दिखाई देते। यहाँ तक कि वे कबाड भी घर से बाहर नहीं जाने देते। कभी कभी तो घर के लोग भी आजीज आ जाते कि यह सब क्या है? अगले चालीस वर्षो में प्रकृति की इस दीवानगी ने गुरूजी को कलागुरू बना दिया। इस बीच धुप्पल में उनका जन्मदिन (जो स्वर्गीय राधाकृष्णन का भी था) शिक्षक दिवस बन गया। छात्रों ने इस दिन में छुट्टी ही देखी। उस शिक्षक को नहीं देखा। इस गुरूजी ने पूरे जीवन में एक ही मुकम्मिल छात्र तैयार किया जिसका नाम था विष्णु चिंचालकर। आज यह नाम 92 वर्ष हुआ। नमस्कार आपको।

दिलीप विष्णुपंत